राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

पावन हों शिक्षा संस्कार
शुद्ध आचरण का आधार

काम काज हो या व्यापार
सभी जगह अच्छा व्यवहार

मित्र पड़ोसी घर परिवार
संबंधों में निश्छल प्यार

यदि हो पाएं तो संसार में
होगा सुख शांति प्रसार

वर्ष 59 जुलाई–सितम्बर 2013 अंक 3

रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

विषय-सूची

जुलाई-सितम्बर 2013

क्रमांक		पृष्ठांक
1. राम भज्यो	*भजन*	01
2. आध्यात्म विद्या का सार (भाग-2)	*लालाजी महाराज*	02
3. भक्ति मार्ग में बाधायें	*डा. श्रीकृष्णलालजी महाराज*	08
4. समर्पण का पर्व - गुरु पूर्णिमा	*डा. करतार सिंह जी महाराज*	15
5. दिव्य देन	*संस्मरण*	22
6. आस्था और विश्वास का महत्व	*लेख*	31

राम ॐ संदेश

संस्थापक

ब्रह्मलीन परमसंत डा. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

संरक्षक

ब्रह्मलीन परमसंत डा. करतार सिंह जी

सम्पादक

डा. शक्ति कुमार सक्सेना

(सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष)

वर्ष 59 **जुलाई–सितम्बर 2013** **अंक 03**

भजन

राम भज्यौ थारा बन्धन कटजा,
सहज परम पदपाओ।
सत् संगत कर हरि रस पीवो,
संसय ताप मिटाओ,
हरि का ध्यान धरो निसिवासर,
नाम की रटन लगाओ।
सुकृत करम करो बिनु स्वारथ,
संयम सेव बढ़ाओ,
राम कृपाते सत्गुरु मिलिया,
उनके चरण चित लाओ।

परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

अध्यात्म विद्या का सार

मज़हब फ़ुक़रा (संत–मत) के सात दर्जे हैं। जिनका इन अक़ीदों से ताल्लुक है वे अच्छी तरह समझ लें कि सालिकों (पंथाइयों या साधकों) को तरीक़ (पंथ) में दाखिल होकर इन से गुज़रना होता है, जिसके लिए पन्थाई को तैयार रहना चाहिए। यह बात इसलिए कही जाती है कि भोले भाले आदमी अक्सर ग़ल्ती से किसी एक मरहले (समस्या) में अटक कर नाहक़ अपना नुकसान कर बैठते हैं। कोई मजजूब (अवधूत) हो जाता है, कोई मस्त बन जाता है और इसी मजजूबियत और मस्ती को ही सब कुछ समझता हुआ उसी का हो रहता है। अगर यह हालतें उसकी अहलियत (अधिकार) के मुताबिक़ हैं तो कोई एतराज़ नहीं लेकिन अगर वह ग़ल्ती का शिकार हुआ जाता है तो :–

"अगर बीनम कि नाबीना व चाह हस्त।
अगर ख़ामोश बेनशीनम गुनाह हस्त।।"

अर्थ :– अगर देखने में आवे कि आदमी अंधा है और सामने कुँआ है तो ऐसी हालत में चुप होकर बैठना गुनाह है।

मजजूबियत व मस्ती सालिकों के नज़दीक अच्छी हालतें नहीं समझी जाती हैं। मजजूब के मानी हैं खिंचा हुआ। उसने किसी जगह की रोशनी को देखा, और हैरत में आकर बेख़ुद हो गया और उसी में ठहर गया। उस गरीब को आगे का पता नहीं मिला। तरक्क़ी रुक गई। ये हालतें बेसूद समझी जाती हैं। दुनियाँ अगर इनकी इज़्ज़त करती है तो करने दो। इनको अपने मैराजे तमन्ना (चाहत का केन्द्र) न बनाओ बल्कि समझ बूझकर किसी आन्तरिक अभ्यासी की मदद से जानकारी प्राप्त करके पहले से ही हर बात को समझ रखो, ताकि

अगर यह हालतें पैदा हो जावें तो उनसे ऊपर उठकर अपना काम बना सको। मौजूदा वक्त की क़द्र करो और जो कुछ हो सके इसी ज़िन्दगी में पूरा करो। यह आदर्श होना चाहिए। क्या ख़बर दूसरे जन्म में क्या हो?

जन्म का मतलब यह नहीं है कि इंसान यह जन्म छोड़कर दूसरा जन्म ले। हमारा शरीर छोटे–छोटे परमाणुओं (cells) का बना होता है। शरीर के परमाणु हर 24 घंटे बाद बदलते रहते हैं। पुराने परमाणु ज़ाया हो(नष्ट) जाते हैं, और नये बन जाते हैं। जिस्म की तबदीली इसी एक जन्म में भी मुमकिन है। हर तीसरे, सातवें या चौदहवें वर्ष इन्सानी जिस्म के सारे ज़र्रात (cells) व गोश्त वग़ैरह बदल जाते हैं। आज के लड़के कल को जवान, परसों अधेड़ और अतरसों बूढ़े हो गये। कहो क्या यह नये नये जन्म हुए या नहीं?

जन्म नाम है तबदीली का। एक हालत जाती है दूसरी आती है। जब तक मुसाफिर मंज़िले मक़सूद तक नहीं पहुँचता तब तक रात के नज़ारे, बियाबान जंगल और पहाड़ों के तमाशे आँखों के सामने आते रहते हैं, मगर आख़िरी मंजिल पर पहुँचकर मेराजे–तमन्ना (इच्छित लक्ष्य) से मिल गया फिर यह सारे झगड़े नज़र से ओझल हो जाते हैं।

इसीलिये कहा गया है कि मज्जूबियत व मस्ती को हाथ न लगाओ, यह बीच की हालतें हैं। इनमें जो फँसा वह मारा गया। आगे क्या होगा न हम जानते हैं न हमारे फ़रिश्ते। सत्यपुरुष की बानी है :–

"एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम,
जन्म तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निज धाम।"

इन मंजिलों को हासिल (दशाओं) करने के लिए सालिकों (पंथाइयों) को सात हालतों (अवस्थाओं) में से गुजरना पड़ता है जिसको मज़हब फुकरा (संतमत) का 'हफ़्त–ख़्वान' कहते हैं जिसके माने हैं 'सात दस्तर–ख़्वान' जिनसे सालिकों को अक्सर गुज़रना पड़ता है। यह कड़े भी हैं और सरल

भी हैं। सारी बात इंसान के हौसले और शौक़ पर मुनहासिर (निर्भर) है। ख़ुशमिजाज़ अपने काम को तफ़रीह और दिलबस्तगी (मनबहलाव) का सबब बना लेते हैं और चिड़चिड़ा आदमी उसी को जान की बला बना लेता है। किसी ने सीधी और सरल ज़ुबान में बयान किया है, किसी ने इशारों की मदद को काम में लिया है और किसी ने और किसी तरह से ज़ाहिर किया है। यह अपनी–अपनी चाहत और पसंद की बात है। हम सहल पसन्द करने वाले आदमी हैं।

सख़्त व मुश्किल शब्दों का हमारा उसूल नहीं रहा और इसी सबब से जो हमारी सुनते हैं और हमारे साथ हमदर्दी रखते हैं उनको मामूली ज़बान में बता देते हैं। हम हमेशा यही सलाह देंगे कि सहल और आसान बातों को अपना रहबर (मार्ग–दर्शक) बनाया जावे, क्योंकि सख़्त और मुश्किल बातों से दिल उलझन में फंस जाता है।

ये सात मंज़िलें (सोपान) इस प्रकार हैं :– (1) तलब (जिज्ञासा) (2)इश्क़ (उपासना) (3) मारफ़त (ज्ञान) (4) तौहीद (अनेक से एक पर आना) (5) इस्तगना (उपराम होना) (6) फ़ना (लय) (7) बक़ा (पुर्नजीवन)।

1) तलब – तलब कहते हैं इच्छा, जिज्ञासा, आरजू और ख़्वाहिश को।

2) इश्क़ – इश्क़ कहते हैं ख्वाहिश के घनेपन की हालत को जिसको कि आम लोग मौहब्बत, भक्ति, प्रेम, उपासना वगैरा कहते हैं। इन दोनों की शुरुआत ख़्याल से है। ख़्याल की गहराई हुई ख़्वाहिश का ही दूसरा नाम इश्क है।

3) मारफ़त – (ज्ञान और पहिचान) जब ख़्याल पैदा हुआ और घना होने लगा तो उसकी हालत आपसे आप समझ में आने लगती है और आदमी उसको जानने पहिचानने और उसकी तशरीह (व्याख्या) करने के क़ाबिल हो जाता है इसी का नाम ज्ञान या मारफ़त है। पहली हालत ध्यान की थी वही ध्यान घना होने पर इश्क कहलाया और इश्क

के होने पर चीज़ की पहिचान होने लगी। इसी को ज्ञान या मारफ़त कहते हैं। तीन हालतें खत्म हो गईं।

4) तौहीद – (एकभाव) यह और कुछ नहीं है सिर्फ़ ख़्वाहिश की निहायत घनी सूरत ही है। जब ख़्याल में उभार हुआ और उसको ध्यान व ज्ञान से तरक्क़ी मिलने लगी तो वही तौहीद हो गई। यह वेदान्तियों का दर्जा है। यहाँ पहुँच कर बाज़ बाज़ लोग दिल के जज़्बे (भाव) को ज़ब्त करने की ताकत न रखते हुये 'अनहलहक़' या 'अहंब्रह्म' की आवाज़ सुनने लगते हैं। यह हालत बीच की है। यही सब कुछ नहीं है और न हो सकती है। माना कि यह दर्जा ऊँचा है, इस दर्जे तक पहुँचने का काम भी कठिन है, मगर यह मंज़िल (अवस्था या आयाम) आखिरी नहीं है, न हो सकती है, न होगी।

वेदान्ती कहता है कि – ''एकोब्रह्म द्वितीयो नास्ति'' (ब्रह्म एक है दो नहीं) और वह बड़े ग़रूर और धमण्ड के साथ दलील देता है कि अब इसके आगे क्या रहा है? सोचने की बात है कि 'एक' सिर्फ़ निस्बती लफ़्ज़ (अपेक्षित या Relative Term) है। एक के पेट में ही अनेक रहते हैं। जहाँ वहदत (एकता) होगी वहाँ वहदत के पेट में कसरत (अनेकता) रहेगी। अगर कसरत न होती तो वहदत का ख़्याल कैसे पैदा होता। बात साफ है, लगाव लपेट का काम नहीं। समझने वाले समझ लें, जो न समझें न सही।

दूसरा कहता है ''ला इलाह इल्लिलाह'' (कुछ नहीं है परमात्मा के सिवाय) इनका भी यही हाल है। दोनों अधर में लटके हुए हैं और ख़्याली झूले में पेंग मार रहे हैं, मगर दिल्ली अभी दूर है। यह जगह मजजूबियत (अवधूतपन) और खतरे की है। यहाँ भी माद्दा (प्रकृति) है, नहीं तो कौन कहता और कौन अनेक की आवाज़ लगाता। 'अनहलहक़' और 'अहंब्रह्म' को 'अना' (नहीं हूँ) और 'अहं' (मैं) से साफ़ करना अभी बाकी है। जब सिर्फ़ 'हक़' रह जायेगा तब देखा जायेगा।

"पहुँचेंगे तब कहेंगे, पहले कहा न जाये।
भीड़ पड़े मन मसखरा, लड़े विधौ भंग जाये।।"

इस मुक़ाम पर पहुँचने वालों की ख़ैरियत नहीं है। हम उनकी ताज़ीम (सराहना) करते हैं, उनके नाम और ज़ज़बात (भावनाओं) की हमारे दिल में इज़्ज़त है। ख़ैर यह दर्जा भी आ गया मगर इसमें ठिकाव नहीं है, फिसल पड़ने का डर है। क्योंकि माद्दा साथ है। इंसान कभी एक का होकर नहीं रहना चाहता है। उसकी तबियत ताज़गी पसंद है।

5) इस्तगना – (उपरामता) जब एकपना व 'एकोभाव' से जी भर गया तब उससे तबियत ऊब गई। अब एक हो या अनेक – इन दोनों में से किसी से कुछ लेना देना नहीं। बात समझ में आ गई। अब न रग़बत (लगाव) है न नफ़रत। इसी को इस्तग़ना कहते हैं। इसी इस्तग़ना को उदासीनता (उपराम होना) कहते हैं।

6) फ़ना – (लय) इस्तग़ना की हालत जब पुख्ता हो गई उसी को फ़ना कहते हैं। फ़ना के मायने 'मर जाना' या 'मादूम' (नष्ट) होना' नहीं है। कुदरत में कोई चीज़ मादूम नहीं होती और न हो सकती है। मादूम होना एक ऐसी हालत है जिसमें ज़ाहिर होने की तमन्ना (इच्छा) नहीं रहती है। यही मंज़िले–मकसूद (लक्ष्य) है।

7) बक़ा – (पुनर्जीवन) जब तक फ़ना व उसकी हालत नसीब (अवस्था की प्राप्ति) नहीं होती है तब तक बक़ा व सत्य का मिलना बड़ा मुश्किल (कठिन) है।

"बे फ़नाये ख़ुद, मयस्सर नेस्त दीदारे ख़ुदा।
मी फ़रीशाद ख़ेशरा अव्वल ख़रीदारे ख़ुदा।।"

अर्थ :– जब तक ख़ुद फ़ना नहीं होता ख़ुदा नहीं मिलता। ख़ुदा को ख़रीदने वाला पहले ख़ुद को बेचता है।

अब भी अगर समझ में नहीं आया तो ऊपर की इबारत को कई दफ़ा पढ़ो। गौर से पढ़ने से समझ में आ जायेगा।

मज़हबी मुनादी करने वालों से अगर कोई बात पूछी जाय तो वे ऐसी भाषा में बोलेंगे जिससे सुनने वालों की अक़्ल भरमा जाय, और वे सुनकर कुछ न कह सकें। ऐसा करने का मतलब होता है कि सुनने वाला उनको बहुत बड़ा और ज्ञानी समझें। उनमें अपनी गाँठ की अक्ल नाम मात्र की भी नहीं होती।

(क्रमशः अगले अंक में)

❖❖❖❖❖❖

मनुष्य को परमात्मा ने केवल एक यन्त्र नहीं बनाया है जो अपनी एक विधि और रीति से काम करता चले, न उसके काम में कोई बाधा आये और न कोई असफलता मिले।

मनुष्य को परमात्मा ने एक स्वतंत्र बुद्धि वाला चेतन प्राणी बनाया है। उसे हाथ पाँव काम करने के लिए और विवके काम का औचित्य-अनौचित्य समझने के लिए दिया है। उसकी इच्छा है कि मनुष्य अधिक से अधिक परिश्रमी, कर्मठ, और धैर्यवान बनें, इसलिए उसके काम निर्विघ्न नहीं होते चलते।

यदि सारे काम बिना बाधा के सहज रूप में होते चलें तो कर्म-कौशल का महत्व ही समाप्त हो जाये। मेरा विश्वास है कि जिस काम को करने में मनुष्य को बाधायें नहीं आतीं, उसे अपने कार्य-कौशल का परिचय देने का अवसर नहीं रहता, वह काम मनुष्य के करने योग्य नहीं होता।

– महामना पं. मदनमोहन मालवीय

प्रवचन गुरुदेवः डा. श्रीकृष्ण लालजी महाराज

भक्ति मार्ग में सांसारिक बाधायें

संत महात्माओं और ईश्वर भक्तों के जीवन चरित्र को पढ़ने से यह मालूम होता है कि दुनियाँ के लोगों ने ईश्वर–भक्ति के रास्ते में बड़ी–बड़ी बाधायें और मुसीबतें पैदा की। ईसा और मंसूर को सूली पर चढ़ना पड़ा, मीरा को विष दिया गया, शम्स तबरेज़ की खाल उतारी गई, गुरु अर्जुनदेव को गरम–गरम रेत और गुरु तेग़बहादुर जी को जलते तेल से नहलाया गया, गुरु गाविन्द सिंह जी के बच्चों को जीते जी दीवार में चुनवाया गया। ऋषि दयानन्द को काँच पीसकर पिलाया गया वगैरा वगैरा। इस तरह की हज़ारों मिसालें मिलती हैं। संत महात्माओं को दुनियाँ वालों ने हमेशा तंग किया, उन्हें तरह–तरह के दुःख दिये, जिससे वे सच्चे परमार्थ की कार्यवाही न कर सकें।

घोर कलियुग आता जा रहा है। आगे जाकर किस वक्त में क्या मुसीबत आयेगी इसका अंदाज़ा नहीं हो सकता, लेकिन जो कुछ संतों और महापुरुषों ने कहा है उसे सोचकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अगर यह अत्याचार न हों तो प्रभु के प्यार की परीक्षा कैसे हो, उसमें पुख़्तगी (परिपक्वता) कैसे आयेगी ? इसलिये जो मालिक को सच्चे दिल से प्यार करता है वही उन मुसीबतों को सहन कर सकेगा और भक्ति और परमार्थ के रास्ते से डगमग नहीं होगा।

यह दुनियाँ काल (शैतान, माया) का पसारा है। काल ने सबको फाँस रखा है। परमार्थ–पथ पर चलना इस फँदे से अपने आपको निकालना है। लेकिन काल, अपनी दुनियाँ से किसी को निकलने नहीं देता। जैसे–जैसे अभ्यासी परमार्थ–पथ पर अग्रसर होता जाता है, काल उसके लिये अधिकाधिक बाधायें पैदा करता है। और जो पहुँचे हुए हैं जैसे संत, महात्मा

और साधुजन, उनके लिए मुसीबतों का रूप और भी भयंकर होता जाता है। सबसे पहले मुसीबत घर वालों की तरफ से पैदा होती है। भक्तों के पीछे जात बिरादरी और छुआछूत की बाधा घर वालों की तरफ से लगती है। घर वाले रोकते हैं किसी तरह परमार्थी कार्यवाही न होने पावे, सत्संग में न जाने पावे, बदनाम करते हैं और हँसी उड़ाते हैं। यह सब भगवान की मौज और भविष्य में किसी अच्छाई के लिए होता है।

एक कहानी है। किसी घर में घड़ी नहीं थी। उस घर का एक आदमी एक घड़ी खरीद लाया और दीवार पर लटका दी। वह घड़ी हर समय टिक-टिक करती रहती थी। उस घर में एक अंधी बुढ़िया रहती थी। उसने न कभी घड़ी देखी थी न उसकी कदर जानती थी। घड़ी की टिक-टिक उसे हमेशा परेशान करती थी और वह चाहती थी कि उसे फेंक दे, लेकिन उसका बस नहीं चलता था। एक दिन घर में चोरी हो गई। उसने कहा कि इस मनहूस घड़ी की वजह से ही ऐसा हुआ। इसके बाद एक-एक करके घर के कई बच्चे बीमार पड़े। बुढ़िया ने कहा कि जबसे यह टिक-टिक वाली मनहूस घड़ी घर में आयी है, हमारे घर पर मुसीबत छा गई है। इसे घर से बाहर फेंक दो। परन्तु उसकी बात किसी ने न सुनी। एक दिन उसके घर में कोई बच्चा मर गया। बस फिर क्या था, बुढ़िया का गुस्सा हद से गुज़र गया। वह अपने आपको न रोक सकी। उसने टटोलते-टटोलते घड़ी को पा लिया और पहले तो उसे पैरों से खूब कुचला फिर घर से बाहर फेंक दिया।

इसी प्रकार जब किसी घर में संत पधारते हैं या कोई दुनियाँदार उनकी सेवा में जाता है, अथवा किसी सत्संग में शामिल होता है, या उपदेश ले लेता है तो उसके घर वाले उसके पीछे लग जाते हैं और घर की हर मुसीबत और बला की जिम्मेदारी सत्संग या संत महात्मा के मत्थे मढ़ देते हैं। कहते हैं कि जब से इन महात्मा जी का आगमन हुआ है, इनका सत्संग किया है, मुसीबत ही मुसीबत आ रही है। कहने का मतलब यह

है कि दुनियाँ ने संतों और उनके भक्तों को कभी चैन से नहीं रहने दिया और न रहने देगी, बल्कि हर रोज़ एक नई व्याधि पैदा करेगी। सच्चे जिज्ञासु इसको अपने प्रीतम की मौज और उसका उपहार समझते हैं। इससे उनका कोई नुकसान नहीं होता बल्कि जितनी ज़्यादा दुनियाँ उनको तंग करती है उतनी ज़्यादा ही उनकी भक्ति बढ़ती है और दुनियाँ से वैराग पैदा होता है।

यहीं पर सच्चे और झूठे की परख होती है। जो मालिक के सच्चे भक्त हुए हैं उन्होंने दुनियाँ की तरफ से निरादर, अपमान और दुर्व्यवहार आदि सभी बातें भुगती हैं और सब कुछ सहन किया है। दुनियाँ वाले बदनामी करें या नेकनामी, चाहे कोई बुरा कहे या दुतकारे, हमें इसकी परवाह नहीं। जिन्होंने भक्ति की राह पकड़ी उन्होंने अपनी दुनियाँ उजाड़ कर रख दी। संसार और परमार्थ, लोक और परलोक दोनों एक साथ नहीं मिल सकते। एक को दूसरे पर कुर्बान करना पड़ेगा। अगर परलोक चाहते हो तो दुनियाँ छोड़नी पड़ेगी। मगर दिखाने के लिए तोड़ फोड़ नहीं करनी चाहिये। ढोंगी ओर कपटी के लिये मालिक के दरबार में कोई जगह नहीं है। तब मालूम हो जायेगा कि भक्ति कहाँ तक पहुँची है। जिसमें सच्ची व पक्की भक्ति होगी वही मालिक के दरबार में पहुँचेगा।

कभी–कभी भक्ति और प्रेम का एक ज्वार भाटा सा आता है और उसमें साधक अपने को ऐसा समझने लगता है कि मैंने सब कुछ पा लिया है मगर ऐसी बाढ़ स्थिर नहीं रहती। एक भक्त ने ईश्वर प्रेम के आवेश में आकर अपने पैरों में पत्थर मारने शुरु कर दिये। उसने कहा कि अगर ईश्वर नहीं मिलता तो मैं अपने पैरों को पत्थर मार–मार कर कुचल डालूँगा मगर यह भक्ति कच्ची थी। पैर भी कुचले गये और ईश्वर भी नहीं मिला। यह एक तरह का ढोंग लगता है। अगर थोड़ी देर के लिये आँखों से आँसू बहने लगें, कुछ क्षणों के लिये बुद्धि तर्क वितर्क छोड़ दे और मन शान्त हो जाए तो क्या यह असली प्रेम है? क्या इसमें स्थिरता आ गई?

सत्संग में आकर गुरु के चरणों में बैठने से, सत्संग के वातावरण से थोड़ी देर के लिये हरेक साधक पर ऐसी अस्थिर हालत गुज़रती है। मगर जहाँ घर पहुँचे और बच्चें ने लिपटकर मीठी–मीठी बातें की या स्त्री ने कुछ कह सुन दिया, सारी भक्ति धुआँ हो जाती है। फिर लौटकर वहीं आ जाते हैं जहाँ थे। भक्ति का वेग आने से हमेशा का गुबार दूर नहीं होता। किसी तलाब की सतह पर काई जमी है। हाथ से हटा दो तो साफ पानी दिखाई देने लगेगा। लेकिन फिर आसपास से आकर काई उसको ढक लेगी।

इस तरह का वेग आना मन का ऊँचा भाव है। यह लक्षण तो अच्छा है मगर स्थायी नहीं है। इस तरह के क्षणिक भाव से क्या ईश्वर मिल गया ? नहीं। उसे कोशिश करके ऐसा स्थायी बनाओ कि हर समय वही हालत रहे। दुनियाँ की हर चीज़ में ईश्वर का रूप देखो, हरेक का काम उसकी सेवा समझ कर करो।

इंसान दुनिया में जब तक रहता है, वहाँ के कर्म तो करने ही पड़ते हैं। एक कर्म फँसाता है और वही निकालता भी है। अगर उस कर्म के करने में अपने आप को शामिल कर दोगे तो फँसायेगा और अगर उसे ईश्वर का और ईश्वर की सेवा समझकर करोगे तो वही कर्म बंधन से छुड़ायेगा। मालिक की याद बराबर बनी रहेगी और प्रेम व भक्ति मज़बूत होती जायेगी। मन से सोचो और बुद्धि से विचार करो कि यह लड़का जिसे तुम अपना कहते हो वह किसका है ? क्या तुम्हारे साथ आया था या तुम्हारे साथ जायेगा ? यह मकान किसका है ? क्या तुम साथ ले जाओगे ?

इसी तरह हर चीज़ के बारे में सोचो तो देखोगे कि कुछ भी तुम्हारा नहीं है। न तुम्हारे साथ आया था न जायेगा। यहाँ की कोई चीज़ तुम्हारे काम नहीं आयेगी। यह सब फँसाने वाली हैं। न मालूम तुम्हारी कितनी शादियाँ पिछले जन्मों में हुई, कितने बेटे बेटियाँ हुईं, कितने मकान बने,

मगर अभी तक तुम्हारी ख़्वाहिश या इच्छा तृप्त नहीं हुई। यह सब तो होता रहा है, और आगे भी हो सकता है, लेकिन मनुष्य जन्म बार बार नहीं मिलता। इसी योनि में ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है, दूसरे में नहीं। इसलिये इसे अमूल्य जानकर इसका उपयोग ईश्वर प्राप्ति के लिए करो।

यह ज़िन्दगी झूठी ज़िन्दगी है। आत्मा मलीन मन के पर्दों में दबी हुई है। जब यह पर्दे हट जाते हैं और आत्मा निखर जाती है तभी असली ज़िन्दगी शुरु होती है। जब किसी पर ईश्वर कृपा होती है और वह उसे अपनाना चाहता है तो उसके बन्धन टूटने लगते हैं। सबसे पहले उसकी प्यारी से प्यारी चीज़ उससे छीनी जाती है। दुनियाँदार इसे देखकर रोते हैं, संत खुश होते हैं कि हे प्रभु! कितना अच्छा हुआ, इसे लेकर तूने मेरा बन्धन काट दिया। इस तरह हर कदम पर इम्तहान होता है। बग़ैर इम्तहान के कोई उसे प्राप्त नहीं कर सकता। कुर्बानी तो करनी ही पड़ेगी। अगर उसे पाना चाहते हो तो दुनियाँ तो क्या गर्दन तक काट कर देनी पड़ेगी।

"जब तक तन नाहीं जरत, मन नाहीं मर जात।
तब लगि मूरत स्याम की, सपनेहुँ नाहीं लखात।।"

यह दुनियाँ धोखा दे रही है। दिखाई कुछ दे रहा है, असलियत कुछ और है। जो असल है वह सिर्फ ईश्वर है,उसे पाने की कोशिश करो।

जब हमें किसी चीज़ से सुख मिलता है, तब हम ईश्वर को बड़ा धन्यवाद देते हैं, और जब किसी चीज़ से दुःख मिलता है या कोई मुसीबत आती है तो ईश्वर से दूर भाग खड़े होते हैं। उस दुःख को मजबूरी में बर्दाश्त करते हैं, लेकिन ईश्वर को धन्यवाद नहीं करते और न खुश होते हैं। कहते हैं कि ईश्वर को ऐसा ही मंजूर था। लेकिन यह मालिक की रज़ा या मर्ज़ी के साथ सहयोग करना नहीं है, क्योंकि आत्मा अभी निखरी नहीं है।

असल निखार तब होगा जब लड़का मरने पर भी खुशी हो जो लड़का पैदा होने के वक्त लोग मनाते हैं। हमारे गुरु महाराज, पूज्य महात्मा

रामचन्द्र जी महाराज जिगर के कैंसर से पीड़ित थे। उन्हें बहुत तकलीफ थी लेकिन वे सदा प्रसन्न दिखाई पड़ते थे। किसी भक्त ने उनसे निवेदन किया कि ''आप इसे अच्छा करने के लिए ईश्वर से दुआ क्यों नहीं करते हैं ? ईश्वर अपने प्यारे भक्तों को ही इतनी तक़लीफ़ क्यों देता है ?'' उन्होंने कहा – ''अगर तुम्हारा माशूक (प्रेमी/प्रेमिका) तुम्हारे गाल पर प्यार से चपत लगा दे तो उसे तुम तक़लीफ़ समझोगे या उसकी एक अदा ? क्या तुम उससे ख़ुश होगे या नाराज़ ? इसी तरह तक़लीफ़ भी माशूक की एक अदा है। ईश्वर हमारा प्रियतम है और प्यार में उसने अगर कोई मुसीबत भेज दी तो वह उसकी अदा है। इसमें हमें तो बड़ा आनंद आता है।'' कहने का मतलब यह है कि जब तक पूर्ण समर्पण नहीं हो जाता, ऐसी अवस्था नहीं आती।

दुख तो आते ही रहेंगे पर दुख बर्दाश्त करने के भी चार रूप हैं – (1) मजबूरी में दुख बर्दाश्त करना। यह 'राज़ी–ब–रज़ा' (यथा–लाभ–संतोष) वाली हालत नहीं है।

(2) दुख को प्रभु की कृपा समझकर बर्दाश्त करना।

(3) दुख आवे तो अपने आपको सराहे और सोचे कि ''हे प्रभु! तेरी बड़ी कृपा है। न मालूम कितनी बड़ी मुसीबत थी जो तूने इतने थोड़े में काट दी। न मालूम सूली पर ही चढ़ना पड़ता जो तेरी दया से, परेशानी की शक्ल में, एक काँटा ही छिद कर रह गया।

(4) दुख आवे तो यह मानें कि यह मेरे माशूक की तरफ से एक तोहफा है, और उसमें ख़ुश रहें।

दुख बर्दाश्त करने का ये चौथा तरीका तो पहुँची हुई महान हस्तियों ने ही अपनाकर दिखाया है। शेर खा रहा है, शरीर की बोटी–बोटी नोचकर चबा रहा है और फिर भी आवाज निकल रही है ''शिवोअहँ, शिवोअहँ।'' जो खा रहा है वह भी ईश्वर और जिसे खा रहा है वह भी ईश्वर। जलते हुए तवे पर बैठे हैं, सिर पर उबलता हुआ तेल डाला जा रहा है, दूर–दूर

तक धुआँ और दुर्गन्ध उड़ रही है और फिर भी मुँह से निकल रहा है– ''वाहे गुरु!'' यह है असली और पूर्ण समर्पण... और सच्ची 'राज़ी–ब–रज़ा' की अमली तस्वीर अर्थात् यथा–लाभ–संतोष का व्यावहारिक स्वरूप।

कोई चीज़ मुफ्त नहीं मिलती। जो चीज़ जितनी मँहगी है उतनी ही ज़्यादा उसकी कीमत देनी होगी। अगर ईश्वर को चाहते हो, हमेशा का आनन्द और सुख चाहते हो जान की बाजी लगानी पड़ेगी। कीमत क्या है ? अपने अरमानों का खून कर दो, इच्छा रहित हो जाओ और अपने आपको पूरी तरह समर्पण कर दो। इसकी मिसाल (उदाहरण) संतो के जीवन से मिलेगी और इसका राज़ (भेद) उनके सत्संग में मिलेगा।

जहाँ आपस में मौहब्बत से रह रहे हों वही सतयुग है। जहाँ एक दूसरे से Differ करते हों (विरोध या असहमति रखते हों) आपस में मतभेद या भेद–भाव हो वहीं कलियुग है। दैवी जीवन वही है जहाँ सबके साथ खुशी–खुशी Cooperate (सहयोग) करते हों।

◆◆◆

एक बार ईसा मसीह केपर नाम के नगर में पहुँचे।वे दुष्ट दुराचारियों के मुहल्ले में ठहरे और वहीं पर रहना भी शुरु कर दिया।

नगर के प्रतिष्ठित लोग ईसा के दर्शन करने पहुँचे तो उन्होंने आश्चर्य से पूछा– 'इतने बड़े नगर में आपको सज्जनों के साथ रहने की जगह न मिली या आपने उनके बीच रहना पसंद नहीं किया ?' हँसते हुए ईसा मसीह ने कहा– 'वैद्य मरीजों को देखने जाता है या चंगे लोगों को ? ईश्वर का पुत्र पीड़ितों और पतितों की सेवा के लिए आया है। उसका स्थान उन्हीं के बीच तो होगा। इसी वजह से मैं इन ज़रूरतमंद लोगों के पास रह रहा हूँ।

प्रवचन परमसंत डा. करतार सिंह जी साहब

समर्पण का महत्वपूर्ण पर्व है-गुरु पूर्णिमा

देखा जाय तो संसार के देशों में ऐसा कोई धर्म, सम्प्रदाय नहीं जहाँ गुरु की महानता और महत्व के प्रति व्यास पूजा या गुरु पूर्णिमा जैसा सुन्दर पर्व मनाने की प्रथा न हो। हमारे यहाँ यह दिन जीवन के चरम लक्ष्य की ओर ले जाने वाले पूज्यतम मार्गदर्शक अर्थात् गुरु की विशेष पूजा का अवसर प्रदान करता है।

गुरु तो अपने शिष्यों की हर प्रकार सेवा करने के कारण पूज्य और कृतज्ञता के अधिकारी सदैव ही होते रहे हैं। परन्तु इस शुभ दिन प्रत्येक शिष्य/साधक का विशेष प्रयास होता है कि वह अपनी प्रगाढ़ श्रद्धा को अपने सद्गुरु के प्रति आभार-स्वरूप प्रकट करे। गुरु भी विशेष उदारतापूर्वक अपने प्रिय शिष्यों पर भगवत-प्रसादी की अमृतवर्षा करते हैं।

ये जो पुष्प या पुष्प हार भेंट किये जाते हैं इनमें वास्तव में तो साधक का अहंकार समर्पित होना चाहिए। दीक्षा के समय यों तो सभी साधक अपने तन-मन-धन गुरुदेव के चरणों में अर्पित कर देने का वचन देते हैं, परन्तु वास्तव में हम स्वनिरिक्षण करके देखें कि हम क्या दे पाते हैं। तन और धन की भेंट तो सच्चे सद्गुरु चाहते ही नहीं। यदि शिष्यों की ख़ुशी के लिये कुछ स्वीकार करते भी हैं तो वह नाममात्र ही लेते हैं। वह तो मन की अर्थात् 'अहंभाव' की भेंट लेना चाहते हैं, जिससे उसका उद्धार हो जाये।

इसी प्रकार हम उनके प्रति सम्मान प्रगट करने के लिये उनका चरण स्पर्श भी करते हैं। गुरुवाणी का एक बड़ा सुन्दर शबद (पद) है कि यदि जीवन का लक्ष्य प्राप्त करना है तो गुरु के चरणों को छुओ। गुरु के चरण

केवल शरीर के चरण नहीं हैं (लाभ इनसे भी होता है)। गुरुवाणी में जो संकेत हैं उसके अर्थ ये हैं कि उनके आत्मिक गुणों को अपने रोम–रोम में रमा लो, अपने भीतर में गुरु के सच्चे स्वरूप को बसा लो। जब तक उनके जो आत्मिक गुण हैं उनको अपनायेंगे नहीं और अपने अनात्मिक अवगुणों को त्यागेंगे नहीं, तब तक विशेष आध्यात्मिक प्रगति नहीं होगी। गुरु जो कि ईश्वर का प्रतिनिधि स्वरूप है– उसके चरणों में माथा टेकने का सही मतलब यही है कि सबसे पहले हम अपने अहंकार को, अपनी बुराईयों को उनके चरणों में अर्पण कर दें। उनके सद्वचनों की प्रसादी लें, निर्मलता लें, उनके गुणों को अपनायें और वैसे ही हम हो जायें। वास्तव में वैसे तो हम हैं भी, पर अहंकार के कारण समझते हैं कि हम शरीर हैं, मन हैं या बुद्धि हैं। कोई समझता है कि बुद्धि तीव्र है, मैं तो अपनी बुद्धि के चातुर्य से दूसरों को प्रभावित कर लेता हूँ। ये मन की बातें रास्ते की रुकावट हैं, अहंकार को पोषित करती हैं।

गुरु पूर्णिमा पर्व के विषय में कहा जाता है कि भगवान व्यास के मन में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि सब लोग गुरु की पूजा करते हैं, सो मैं किसकी पूजा करूँ? इससे पहले एक दिन यह घटना हो चुकी थी कि नदी में स्वच्छन्द भाव से गोपियाँ स्नान कर रहीं थीं। तभी युवा पुत्र शुकदेव वहाँ से आगे–आगे निकले। गोपियाँ उसी प्रकार क्रीड़ामग्न निःसंकोच भाव से निर्वस्त्र सी अवस्था में नहाती रहीं। कुछ ही देर में पीछे–पीछे कुछ वृद्ध संतों की टोली भी उधर से गुजरी तो युवतियों ने तुरन्त पर्दा कर लिया।

मुनियों को यह व्यवहार देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। अतः ठहर कर आपने उनसे प्रश्न किया कि ''हम इतने वृद्ध हैं, आपके पिता समान भी हैं। आपने युवा शुकदेव से तो पर्दा नहीं किया, हमसे पर्दा क्यों किया?'' इस पर गोपियों ने उत्तर दिया कि ''महाराज जी, शुकदेव के हृदय में स्त्री–पुरुष की भावना नहीं है, किसी प्रकार की द्वन्द भावना नहीं है।

उनके हृदय में केवल परमात्मा हैं। आपके हृदय में अभी तक स्त्री–पुरुष का भाव और भेद है। इसलिये हमने ऐसा किया।''

उन महिलाओं के उत्तर ने व्यास जी को सोच में डाल दिया। इसी दशा में उन्होंने मुनि–विद्धानों से पूछा कि वे स्वयं किसकी पूजा करें? उत्तर मिला कि इस समय आपको स्पष्ट हो ही गया है कि शुकदेव जी के समान गुरु पदवी योग्य कोई अन्य नहीं है। तब उन्होंने शुकदेव जी को ऊँचे आसन पर बैठाकर उनकी पूजा की है। इसमें विशेष बात क्या है? बात वही है जो मुनियों ने व्यास जी को सुझाई, बतायी थी। व्यास जी तो स्वयं महान ज्ञानी थे, जो शास्त्र की बातें लिखते, ज्ञान का उपदेश देते, परन्तु उनके भीतर में भी द्वैत था। इस मलीनता को दूर करने के लिए सत्य को अपनाया और उसी भाव को लेकर उन्होंने सुपुत्र शुकदेव के चरणों की पूजा की, उनको गुरु का सम्मान दिया। ज्ञानी हृदय की द्वैत भावना दूर हुई– जहाँ प्रेम है वहाँ अहंकार और अज्ञान नहीं रहता। सूफियों की भाषा में :–

तर्के दुनियाँ, तर्के उकवा, तर्के मौला, तर्के तर्क।

अर्थात् दुनियाँ को मन से तर्क करो (छोड़ो) फिर गुरु के ख़्याल को छोड़ो, फिर ईश्वर के ख़्याल को भी छोड़ो और अंत में फिर छोड़ने के ख़्याल को भी छोड़ो। अब क्या बचा? केवल ब्रह्म। अतः साधक की वही गति होनी चाहिये।

गुरुनानक देव जी ने अपने प्रिय शिष्य अंगद देव जी (अंगद मतलब होता है जिसने अपने आपको जला दिया है) को अपने स्थान पर गुरु नियुक्त किया है। तब उन्हें अपने स्थान पर बिठाया है और विधिवत नारियल पुष्प आदि लाये हैं, उनसे उनकी पूजा की है और चार बार परिक्रमा करके उनके चरणों में चढ़ाई है। फिर अपने नाम से गुरु शब्द हटाकर केवल नानक रहने दिया है और उन्हें गुरु अंगद देव कहकर संबोधित किया है। ये होता ही आया है कि जब गुरु अपने उत्तराधिकारी शिष्य को अपना स्थान देता है तो उसकी पूजा करता है।

पाँचवे सिख गुरु अर्जुनदेव जी रात को जब सब सो जाते थे, तो अपने गुरु के पैरों को गर्म पानी से धोते थे। उनकी दाढ़ी लम्बी थी, उस दाढ़ी से वे उनके पाँव पोंछते थे। शिष्य तो गुरु की सेवा प्रेम से करते ही हैं, गुरु भी शिष्य से अत्यंत प्रगाढ़ प्रेम करते हैं।

हमारे दादा गुरुदेव पूज्य लालाजी (महात्मा रामचन्द्र जी महाराज) के दर्शन जिन्होंने किये हैं और उनकी संगति प्राप्त की है वे जानते हैं कि वे रात्रि को 10–11 बजे आते थे। सब फर्श पर सोये हुए होते थे, कोई जगह खाली नहीं मिलने पर जहाँ जूते पड़े होते थे वहाँ चुपचाप सो जाते थे।

महापुरुषों की लीला हमेशा से होती आई है। वे इसलिये लीला करते हैं कि उनके जीवन से हमें प्रेरणा मिले। यदि वे ऐसा न करें तो हमें प्रेरणा कैसे मिलेगी ? केवल शब्दों से प्रेरणा नहीं मिलती। उनका जीवन हमारे लिये एक मिसाल होता है, वो हमारे दिशाबोध के लिए प्रकाश–स्तम्भ होते हैं, ध्वज जैसे होते हैं जिसके पीछे–पीछे हम चलें।

पूज्य गुरुदेव (महात्मा श्रीकश्ष्ण लाल जी महाराज) की सेवा में सेवक शुरु–शुरु में दिल्ली से सिकन्दराबाद गया, बड़ी गर्मी थी। उन दिनों शायद सिकन्दराबाद में पंखे नहीं लगे थे। खस–खस की टट्टी लगी थी। आपने मुझे ठंडा पानी पिलाया और कहा कि ''आप थोड़ी देर लेट जाइये, मैं अभी आता हूँ।'' यह कहकर वे घर के अन्दर चले गये। तब घर में न तो कोई नल हुआ करते थे न कोई और water supply का साधन (पानी का स्तोत्र) ही होते थे, बस एक कुआँ था, गहरा सा। आपने उसमें से दो बड़ी–बड़ी बाल्टियाँ पानी भरा और स्नानगश्ह में रख दिया। आपने हाथ से मेरी चप्पलें उठाकर बाहर रख दीं। एक धुली हुई धोती और तौलिया भी वहाँ लटका दिया। फिर आकर मुझसे कहा कि ''आप स्नान कर लीजिये फिर भोजन करेंगे'', ऐसे प्रेमिल एवं कश्पालु होते हैं ये गुरुजन। संत ऐसे ही आत्मस्थित रहते हुए संसार का काम करते हैं।

भगवान राम का जीवन आप सब जानते हैं। उन्होंने मनुष्य के रूप में साधारण साधक बन कर वशिष्ठ जी, विश्वामित्र जी और बाल्मीकि जी से उपदेश लिया। उपदेश लेकर भी कहीं चले नहीं गये। उन्होंने अपने जीवन का उदाहरण देकर बता दिया कि जीवन कैसे जीना चाहिए। एक समय ऐसा था जबकि भगवान राम को पता था कि 2–4 घंटे में ही वे राजगद्दी के अधिकारी होने वाले हैं। आपको चक्रवर्ती राजा घोषित किया जा रहा है, परन्तु शीघ्र ही उन्हें उससे वंचित करके वनवास दिया जाता है।

अचानक आज्ञा होती है कि 14 वर्ष के लिए वनवास करो। एक ओर महान सुख है और दूसरी ओर महान दुख। वे संसार को दिखाते हैं कि कैसे ऐसी अवस्था में भी अत्यंत शान्त और समभाव में रहते हुए बिना किसी अन्य भाव के जीवन जिया जा सकता है।

सीता जी जो अत्यन्त कोमल हैं, जिनके पाँव तले फूल बिछते थे, गद्दे और कालीन रहते थे, उनको भी कह दिया जाता है कि जंगल में चली जाओ, वनवासी पति की हर प्रकार सेवा करो– जंगल से लकड़ी काट कर लाओ, भोजन आदि का प्रबन्ध करो आदि–आदि। उनकी भी स्वेच्छा यही थी। वो महान स्त्री भी एक आदर्श जीवन व्यतीत करके सबको प्रेरणा देती हैं कि संकट के समय भी अपना कर्त्तव्य और धर्म तथा धैर्य नहीं छोड़ना चाहिये।

जितने भी महापुरुष हुए हैं (भगवान राम, श्रीकश्ष्ण तथा अन्य संत आदि) वे प्रत्येक साधक को प्रेरणा देते हैं कि हम अपने अहंकार को छोड़ें, और दीनता को अपनायें। पुरातन काल में न जाने कितने ऐसे महापुरुष हुए होंगे जिन्होंने परम ज्ञानी होते हुए भी दीनता को अपनाया। जब तक दीनता नहीं आयेगी साधना नहीं होगी। परमसंत कबीर साहब को ही लीजिये। कितने दीन बने हैं, मानो सारा संसार उनसे अच्छा है, बस वही बुरे हैं :–

''बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न दीखा कोय।
जो घर खोजा आपना, मुझ सा बुरा न कोय।।''

गुरु नानक देव जी भी कहते थे :–

''जेता सागर नीर भरया, तेते अवगुन मोहिं।''

और उन्हीं की दीनता है कि :–

''निन्दौ निदो मोकहि निन्दौ।''

आज का पवित्र दिन अपने पूज्य गुरुदेव के चरणों में पुनः समर्पण करने का दिन है जिसे अंग्रेजी में कहते हैं Rededication। शरीर भी आपका, मन भी आपका और सब कुछ आपकाकृकृ परन्तु यह कहने भर को नहीं – सचमुच मन से होना चाहिए।

हम तो यह सब भूल ही जाते हैं। सत्संग खत्म होते ही खाने पीने में, बातों में लग जाते हैं तथा सब भूल जाते हैं। ये मन की वशत्ति है – हम सबकी यही हालत है – किसी का दोष नहीं है। चाहिए ये कि क्षण प्रति क्षण हम जागश्त रहें और प्रयास करें कि प्रत्येक क्षण हमारा मन गुरु चरणों में लीन रहे।

आज हम सब मिलकर पूज्य गुरुदेव की जीवन लीला का स्मरण करें। उन्होंने अपने जीवन के जो उदाहरण हमारे सामने रखे हैं हम वैसा आदर्श जीवन जियें – जीने का अधिक से अधिक प्रयास करें। उनके पद चिन्हों पर चलने का पुनः संकल्प करें।

गुरु सेवा का सर्वोत्तम रूपः– सेवा कई प्रकार की होती है। हाथ पाँव की सेवा, धन की सेवा परन्तु मन की सेवा बहुत ऊँची है। यानि जो भी आपके इष्टदेव कहें, वही हुक्म है और उनकी आज्ञा का पालन करें। यदि यही बात ध्यान में रखें कि जो भी गुरु महाराज के आदेश हैं – उन्हीं का पालन करते चले जायें तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आत्मा का साक्षात्कार दूर नहीं है।

परन्तु हम ऐसा करते नहीं, उनकी बातों की तरफ़ ध्यान नहीं देते, अपनी मनमानी करते हैं। दीक्षा लेते वक्त जब हमने तन, मन, धन देने का वचन दिया तो फिर हमारा इन चीजों से मोह क्यों रहे? परन्तु है कोई ऐसा व्यक्ति जिसको अपने शरीर का मोह न हो? अपनी धन सम्पत्ति या स्त्री–पुरुष के संबंधों के प्रति आसक्ति न हो, या अपने विचारों को छोड़ दिया हो?

काफ़ी समय हो गया है। आपको बारम्बार यही अनुरोध करूँगा कि जो आपके इष्टदेव के आदेश हों उनके पालन में कभी संकोच या विलम्ब नहीं करना चाहिए। विश्वास मानिये कि इसी सेवा के द्वारा आप आत्म साक्षात्कार करके जीवन सफल कर लेंगें, मानव जीवन को सार्थक और धन्य कर सकेंगे।

गुरुदेव आप सब पर कश्पा करें। उनकी कृपा तो सब पर बरसती ही रहती है। सूफ़ियों में इसे 'फ़ैज़' कहते हैं। इसे हर वक्त ग्रहण करते रहना चाहिये। सूर्य तो प्रकाश देता है पर घर की खिड़की बंद हो तो हम उस प्रकाश यानी फ़ैज़ से वंचित रह जाते हैं।

इस कृपा को ग्रहण करने का साधन ही हमारे यहाँ कराया जाता है। यह ज़रूरी नहीं कि गुरु शारीरिक रूप में ही आपके पास बैठा हो। आपका ध्यान उधर हो तो वह भी गुरु का संग ही है।

मेरे से जो सेवा हो सकती है, जैसा भी मैंने आज तक की है, अच्छी या बुरी, उसे स्वीकार करें और मेरे लिए भी प्रार्थना करें कि मैं भी आपकी योग्य सेवा कर सकूँ – हाथ पाँव से, शरीर से, मन से तथा आत्मा से। हम सब प्रार्थना करें कि आज के पावन पर्व पर गुरुदेव हमें शक्ति दें कि जैसी वे हमसे आशा रखते थे वैसे हम बनें–अपना जीवन सफल करें। मेरी शुभकामनायें आपके साथ हैं। गुरुदेव आपका कल्याण करें।

●●●

संस्मरण

दिव्य देन

ये गुरु कृपा नहीं तो और क्या है।

1. एक बार की बात है मेरे दूसरे बेटे डा. प्रमोद कुमार को जापान जाना था। उसके पैर में इतना दर्द था कि डाक्टर साहब ने उसे जाने से मना कर दिया और कहा कि कम से कम एक महीने का वक्त चाहिए कि वह जाने लायक हो सके। एक महीने का समय बहुत होता है और जापान जाना नौकरी के लिये आवश्यक था, इसलिये डाक्टर की राय न मान कर वह विदेश चला गया। हमने कुछ दिन बाद बहू से फोन पर बात की तो पता चला कि बेटे के पैर में इतना दर्द है कि वह चाह कर भी ऑफिस नहीं जा पा रहा है। मुझे बहुत चिंता हो गई और मैनें बहू से कहा कि 'तुम गुरु महाराज से फोन कर के बात करो और कहो कि मैं निर्मल जी की बहू बात कर रही हूँ और मेरे पति को ऐसा कष्ट है' बहु ने बात की तो गुरुदेव बोले ''कृबेटी परसों बात करना'' और फोन रख दिया। अब देखिये गुरु कश्पा, जब दो दिन बाद जापान से फोन पर बात की तो हमारा बेटा बोला कि ''पैर का दर्द अब ठीक है और मैं ऑफिस भी गया था''। ऐसी है मेरे प्रभु की महिमा।

2. बात उस समय की है जब मेरी बेटी अनुपम लखनऊ में पी. ओ. की कोचिंग कर रही थी। उसकी तबियत ठीक नहीं थी फिर भी हम लोगों ने उसे दिल्ली भंडारे में ले जाने के लिए साथ ले लिया। चौधरी भवन पहुंचने के बाद सोचा कि तैयार हो कर गुरु महाराज के घर पर मिल आते हैं जबकि सब लोगों ने समझाया कि वहाँ कोई नहीं जाएगा मना किया गया है। मन नहीं माना और हम गुरु महाराज के डेरा पर चले ही गये। कुछ देर बैठने के बाद भी जब दरवाजा नहीं खुला तो हम वापस

लौटने ही लगे थे कि ऊपर से वीरू आया और बोला कि आप को गुरुमहाराज बुला रहे हैं। ऊपर जाने पर हमने प्रणाम किया और गुरु महाराज ने अनुपम को अपने पास बिठा लिया और उसकी सारी बातें सुनी। बेटी बहुत खुश हो गई और उसे बहुत शांति मिली। बाद में बेटी ने हमको बताया कि वह सोच के आई थी कि यदि आज मुझे गुरुदेव नहीं बुलाते तो मैं फिर कभी भी सत्संग में नहीं जाऊँगी। ना जाने उसे क्या तकलीफ थी, हम भी नहीं जानते आज तक, पर ऐसा लगता है कि मेरे प्रभु सब के मन की बात को पहचान लेते थे और इस प्रकार अपना प्रेम देते थे कि लगता था जैसे प्रभु ने अपनी गोद में ही बिठा लिया हो।

3. पटना भंडारे की बात है, हम लोग जाने के लिये तैयार थे कि तभी चाय पीने बैठ गये। जब बस स्टैंड पर पहुँचे तो पता चला कि अभी 5 मिनट पहले ही बस निकल गई है और अगली बस सुबह पाँच बजे की है। हम बहुत निराश हो गये। तभी देखा कि एक जीप खड़ी है और एक लड़का आया और बोला मामा कहाँ जाना है? मेरे पति ने कहा पटना जाना है, उसने हमें बैठा लिया और हम को सत्संग भवन पर छोड़ दिया। उसने एक भी पैसा नहीं लिया। पता नहीं वो कहाँ से आया था। यह गुरुदेव की ही कृपा थी कि हम बिना किसी परेशानी के भंडारे में पहुँच गये।

वहाँ पहुँच कर बस एक ही बात मन में थी कि जल्द से जल्द गुरुदेव के दर्शन हो जायें, फिर उसके बाद ही कोई और काम किया जाये। जहाँ गुरुदेव ठहरे थे वहाँ किसी नौकरी से सम्बंधित कोई परीक्षा थी जिस की वजह से किसी का भी अंदर जाना मना था केवल एक दो लोग ही अंदर जा सकते थे। हम भी निराश हो कर वहीं बैठ गये। लेकिन मन में चाह ज़रूर थी कि गुरुदेव के दर्शन किसी तरह हो जाएं। इतने में एक औरत 40–45 साल की होगी, चेहरा चमकता हुआ, बिल्कुल गोरी और हल्के पीले रंग की साड़ी पहने हाथ में 2 अमरूद लिये आई और बिना पूछे

अंदर चली गई। तभी वहाँ तैनात सिपाही बोला आप लोग भी अंदर चले जाइए। जब हम ऊपर पहुँचे तो वह औरत वहाँ कहीं भी दिखाई नहीं दी और उस औरत को आज तक मैंने सत्संग में भी कभी नहीं देखा। आज भी उस चेहरे को याद कर के आँखो में आँसू आ जाते हैं। ये मेरे गुरु महाराज की ही कश्पा है और कुछ भी नहीं। उनकी महिमा जितनी लिखूँ कम है। उनको जिस रूप में आप आज भी देखना चाहे वे उसी रूप मे नज़र आते हैं। जब जब उन्हें दिल से याद किया, जहाँ कहीं भी पुकारा हमेशा उनको वहीं पाया, असीम कृपा है मेरे गुरुदेव की।

चमत्कार एवं अभूतपूर्व दया

1.एक दिन पूज्य चौहान साहब के घर पर प्रातः का सत्संग समाप्त हुआ ही था, गुरुदेव अपनी मौज में थे और हम सब को बेर जो की चौहान साहब ने मंगवाए थे बांट रहे थे। पता नहीं उन बेरों में क्या मिला दिया उन्होंने कि एक अजीब से आनंद की अनूभूति हो रही थी। सभी बेर खाने में मस्त हो गये थे कि तभी एक बाबा जो कि अधिकांशतः एटा में गरीब लोगों में घूमा करते थे वहाँ आ पहँचे और ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगे 'कृजय माँ भवानी, कृ जय माँ भवानीकृ जय मां,कृजय मां,' आदि आदि। कुछ ही क्षणों में देखते ही देखते वे गुरुदेव के पास पहुँच गये और उनका हाथ पकड़ कर ज़ोर ज़ोर से चिल्लाना शुरु कर दिया। हम सब उन बाबा को देख कर स्तब्ध रह गये और विशेष रूप से मैं और पूज्य चौहान साहब तो एक दूसरे को देख कर समझ ही नहीं पा रहे थे कि क्या करें। सच कहूँ तो मुझे बहुत गुस्सा भी आ रहा था उन बाबा पर कि ये कैसा मज़ाक है आखिर ? वहाँ उपस्थित हर किसी को अब सहन नहीं हो रहा था और सभी यह सोच रहे थे कि अब कुछ न कुछ तो करना ही होगा। सारा मस्ती का माहौल एकदम सन्नाटे में बदल गया। परंतु कमाल यह था कि गुरुदेव एकदम शांत बैठे मुस्करा रहे थे और उन बाबा का नाच देख

रहे थे। फिर थोड़ी देर तमाशा देखने के बाद गुरुदेव ने बड़ी शांति के साथ उस बाबा का हाथ अपने हाथ में लिया और बाबा के पास जा कर बहुत ही धीरे से बोले कृजय माँ। आश्चर्य की बात है कि उन बाबा के हाथ में जैसे करेंट लग गया हो, और वे गुरुदेव से अपना हाथ छुड़ाना चाह रहे थे, परंतु झटके पे झटके लग रहे थे। बस जैसे ही गुरुदेव ने उनका हाथ छोड़ा वे अपना हाथ झटकते हुए बिना पीछे देखे वहाँ से भाग खड़े हुए। उस दिन के बाद जहाँ तक मुझे याद है, उन बाबा को मैनें कई दिनों तक नहीं देखा और कुछ दिन बाद पता चला कि वे एटा छोड़ गये हैं। गुरुदेव ने शांति के साथ ऐसा क्या कर दिया, हमारी तुच्छ बुद्धि से परे की बात है।

2. बात 10 नवम्बर 1979 की है, जब बरेली में तीन दिन का सत्संग पूज्य गौतम जी के घर पर संपन्न हुआ और सभी लोग वापस घरों को लौट रहे थे। गुरुदेव से विदा लेकर मैं भी सड़क पर बस पकड़ने के लिये पहुँचा कि तभी पूज्य चौहान साहब मिले और उन्होंने बताया कि पूज्य गुरुदेव मुझे याद कर रहे हैं। मैं अपने बेटे अखिलेश जो कि गोद में था और पत्नी कमलेश के साथ फौरन वापस गुरुदेव के पास पहुँच गया। गुरुदेव बोले 'बेटे आप जा रहे हो', मैंने कहा 'जी हाँ', उन्होंने मेरे और अखिलेश के सिर पर हाथ फेरा फिर बेटे की ओर इंगित कर बोले ''छोटे इंजीनियर साहब ईमानदारी की कमाई ही खाना''। मेरी समझ में कुछ नहीं आया, हमने गुरुदेव को प्रणाम किया और चल दिये। वापस चौहान साहब के पास पहुँचे और सारी घटना बयान कर दी। मेरी बात सुन कर चौहान साहब बोले, 'बेटे मुझे मालुम होता है कि तुम्हारा प्रमोशन होने वाला है'। मैंने कहा 'बाबू जी 1976 से अब तक नहीं हुआ और अभी तो कोई संभावना भी नहीं है'। खैर हम सब एटा वापस आ गये। मैं डिपार्टमेंट की परीक्षा पास कर चुका था कुछ कारणवश पोस्टिंग नहीं हो पा रही थी। फिर मेरे एक मित्र जो कि पनकी, कानपुर के पास रहते

हैं का फोन आया कि लिस्ट आ गई है और मेरा प्रोमोशन हो गया है। मैं बहुत खुश हुआ, लेकिन पुनः ज्ञात हुआ कि लिस्ट में मेरे मित्र छोटेलाल का नाम है मेरा नहीं। अब मैं फिर से परेशान हो गया और बड़ी उलझन सी दिमाग में थी। इसी अजीब उधेड़बुन में मैं घर लौटा तो पता चला कि मेरे मित्र को ज्ञात हुआ है कि हम लिस्ट देख सकते हैं, उन्होंने तुरंत लखनऊ चलने को कहा और हम दोनों एक दम निकल पड़े। मन में अजीब सी अशांति और द्वन्द की स्थिति थी, कि आखिर गुरु वाक्य मिथ्या कैसे हो सकता है। क्षणिक से अविश्वास ने मुझे रात भर परेशान किया। मुझे अपने आप से घश्णा सी होने लगी। रात भर सफर कर सुबह हम लोग लखनऊ पहुँच गये। वहाँ एक मित्र के घर पहुँचे तो उसने बताया कि लिस्ट तो आ गई है और उसकी कॉपी भी उसके पास है, देखा तो मेरा नाम था, 13000 परीक्षार्थीयों में से केवल 100 पास हुए थे और मेरा 26वाँ नम्बर था।

आज भी मुझे इस बात का दुख रहता है कि मुझे पूर्ण विश्वास उस दिन क्यों नहीं हुआ जब गुरुदेव ने स्वंय मुझसे कहा था। उनकी लीला भी विचित्र है।

– आर. पी. शिरोमणी, आगरा

दिव्य दर्शन

1. कुदरत ने हर वस्तु पोशीदा (छुपा कर) रखी है, इसलिये मैं पहले पूज्य गुरुदेव से माफी माँगता हूँ कुछ राज़ की बात बताने के लिये, ताकि जो गलतियाँ मैंनें की हैं, आप लोग उसे करने से बचें।

पूज्य गुरुदेव की कृपा से मैं इस सिलसिले से 1957 से जुड़ा हूँ, जब मैं 12वीं कक्षा पास कर रूड़की के कम्पीटीशन की तैयारी कर रहा था। उन दिनों हम मैंनपुरी में रहा करते थे और मेरे मन में बड़ी ही तीव्र

इच्छा थी, कि मैं किसी ऐसी महान हस्ती से मिलूँ जिसने ईश्वर को देखा हो। वहीं हमारे घर के पास एक प्रोफेसर सक्सेना रहते थे जिन्होंने मुझे पूज्य सरदार शेर सिंह जी से मिलवाया जिनके घर सुबह और शाम को सत्संग होता था और परम संत डा. श्रीकृष्णलाल जी महाराज की फोटो लगी हुई थी, तब मैनें पहली बार गुरुदेव के दर्शन किये। सन् 1960 की बात है मैं अपने घर की छत पर सोया हुआ था, क्या देखता हूँ कि पूज्य भाई साहब (सरदार शेर सिंह जी) सूक्ष्म रूप में आये है और खड़े है। दो घंटे बाद वे वास्तव में हमारे घर आ गए। मैंनें पूछा आप सुबह भी तो आए थे, वे बोले हाँ, अब चलो मैं तुम्हें एक महापुरुष से मिलाने ले चलता हूँ। वे मुझे गाज़ियाबाद की रामाकृष्णा कॉलोनी ले आए जहाँ गुरुदेव डा. श्रीकृष्णलाल जी महाराज के मैंनें पहली बार साक्षात् दर्शन किये। उसी शाम हम सभी सिकन्द्राबाद के लिये रवाना हो गये। बस की पहली सीट पर गुरुदेव और फूफा जी (श्री सेवती प्रसाद जी) बैठे और उनके पीछे की सीट पर मैं और पूज्य सरदार शेर सिंह जी बैठे हुए थे। मैं लगातार पूज्य भाई साहब से बातें कर रहा था। थोड़ी देर में पूज्य गुरुदेव डा. श्रीकृष्णलाल जी साहब पलटे और मुझसे कहा ''क्या कुफ्र ढा रहे हो, भला संध्या के समय भी कोई बात करता है, क्या नूर बरस रहा है''। आज भी जब संध्या का समय होता है मुझे उनकी बात याद आ जाती है और शब्द जारी हो जाता है। गुरुदेव ने इतनी गहरी बात सहज में ही समझा दी, ये होती है गुरु कृपा।

2. 1964 में मैं A.I.M.E की परीक्षा दे रहा था और हर बार कोई न कोई अड़चन आ जाती, कभी 1965 की लड़ाई तो कभी घर में शादी आदि, इस बार मैंनें सोच लिया था कि परीक्षा के बाद सीधा सिकन्द्राबाद ही जाऊँगा। इस परीक्षा में 17 पेपर होते हैं और मेरे 5 अभी बाकी थे। जैसे ही मैं गुरुदेव के पास पहुँचा वे कहने लगे कि ''ईश्वर करें आप पास हो जायें, आप की सबसे बड़ी कमी ये है कि आप अपना सारा भार

गुरु पर छोड़ देते हैं, और खुद मेहनत नहीं करते'' उसके बाद से मेरी यह कोशिश रही कि मैं हर काम पूरी मेहनत व ईमानदारी से उनका सहारा लेकर करूँ। जब परीक्षाफल आया तो मैं सब पेपर में पास था, बस एक पेपर में एक नंबर ग्रेस का चाहिए था सो मिल गया। इस के पश्चात् मेरी ज़िन्दगी ही बदल गई जिसका लाभ मुझे जीवनभर मिला और आज भी मिल रहा है।

3. उन दिनों मैं फौज में था और जम्मू से सीधा सिकन्द्राबाद पहुंचा, सत्संग में सबसे पीछे बैठा था और मन ही मन कह रहा था कि जब तक आप मुझे पूर्ण रूप से ग्रुरु के लक्षण नहीं दिखाते तब तक मैं आपको गुरु धारण नहीं करूँगा। अब देखिए गुरु कृपा, उसी वक्त मुझे लगा कि कोई मेरी सुरत को ऊपर खींच रहा है और ऊपर ले जा कर ऐसे स्थान पर छोड़ा जहाँ सिर्फ आनंद ही आनंद है, और नीचे आने का मन नहीं कर रहा है, आप पूर्ण प्रकाश में मेरे सामने खड़े हैं। सत्संग समाप्त हुआ और मेरा शरीर एकदम हलका हो गया, ऐसा कोई एक सप्ताह तक रहा। उसी वक्त गुरुदेव ने पूज्य भाई साहब (डा. करतार सिंह जी साहब) से कहा कि जो वो पीछे साहब बैठे हैं उनके ठहरने और खाने पीने का इंतज़ाम करवा दें। उस दिन पहली बार पूज्य सरदारजी साहब से मेरा परिचय हुआ। पूज्य भाई साहब बोले ''भाई बड़े ठाढे हो'' (यानी बहुत किस्मत वाले हो), मैं मुस्कुरा दिया, आज यह बात ज़ाहिर कर रहा हूँ।

सच तो यह है कि अगर आप गुरु से सच्चे दिल से प्रार्थना करोगे तो क्षणभर में आपको उन अवस्थाओं से गुज़ार देंगे जिससे आपका विश्वास ईश्वर में पक्का हो जाएगा। उसी दिन गुरुदेव डा. श्रीकृष्ण लाल जी ने मुझे पूज्य भाई साहब के सुपुर्द कर दिया और मैंने बाद में पूज्य डा. करतार सिंह जी से ही दीक्षा ली।

– कैप्टन के. सी. खन्ना, ग़ाज़ियाबाद

दिव्य आत्मा आई हम पहचान न सके

कुछ महापुरुष ऐसे होते हैं जिनसे हम कितना भी लें कोई छोर दिखाई नहीं देता। परम पूज्य डा. करतार सिंह जी साहब भी ऐसी ही आलौकिक विभूति थे। उनके स्मरण मात्र से ही सब कुछ मिल जाता है। यहाँ मैं अपनी लेखनी से कुछ संस्मरण प्रस्तुत कर रहा हूँ, यदि कोई त्रुटि हो तो क्षमा प्रार्थी हूँ।

1. शताब्दी भंडारा फतेहगढ़ में संपन्न हुआ, इसमें रामाश्रम सत्संग के विभिन्न संत पधारे। इसकी अध्यक्षता पूज्य सरदार जी साहब ने की। इसी अवसर पर पूज्य सरदार जी साह्ब तथा पूज्य बापा जी महाराज (पं हीरा लाल जी जोशी) की भेंट हुई। बापा जी महाराज, ग्राम रावटी जिला रतलाम (म.प्र.) के रहने वाले थे, और इनके ग्राम रावटी में पूज्य लाला जी महाराज अनेक बार गये थे। शताब्दी भंडारे के बाद बापा जी महाराज बीमार पड़ गये और यह समाचार पाकर पूज्य सरदार जी साहब रतलाम पधारे। उनके साथ श्री सतीश वर्मा जी, श्री महेश चन्द्र कुल्श्रेष्ठ जी व सेवक भी गया था। पूज्य बापा जी महाराज लेटे हुए थे और जैसे ही पूज्य सरदार जी साहब उनके पलंग के पास पहुँचे वे उठ कर बैठ गये। इस सदी के दो महान संतों का मिलन था, कैसा अदभुत समय था, दोंनों विभूतियों ने एक दूसरे को देखा और अपार प्रेम और फैज़ का जो नज़ारा वहाँ देखने को मिला वह बयान से परे की बात है। आँखों से अश्रुधारा रोके नही रुक रही थी, जो लोग उस वक्त वहाँ मौजूद थे वे ही इसे जानते हैं। इसके पश्चात कुछ देर वहाँ रुक कर पूज्य सरदार जी साह्ब लौट आये और बाद में कुछ दिनों बाद पता चला की बापा जी महाराज की तबियत ठीक होने लगी है।

2. 1973 में मेरी पद स्थापना उज्जैन हो गई। पूज्य सरदार जी साहब ने आदेश दिया कि मालवा के सत्सगी भाईयों को बुला कर उज्जैन में सत्संग करो। पूज्य बापा जी महाराज से अनुमति प्राप्त कर सत्संग

आयोजित करने का निर्णय लिया गया। मेरी पत्नी ऊषा जौहरी ने कहा 'पैसे का इंतज़ाम कैसे होगा ?' दूसरे ही दिन कचहरी में लेखपाल ने कहा '1500 रुपए का आपका चैक मुरैना से आया है', और व्यवस्था हो गई। वहाँ सत्संग में ग्राम तराला के एक वकील साहब आए और पूज्य सरदार जी साहब से कहा मेरे पिताजी का गैंगरीन का ऑपरेशन आज होना है और वे बुज़ुर्ग हैं घबराए हुए हैं। यह सुनते ही पूज्य सरदार जी साहब ने मुझे आदेश दिया कि अस्पताल चलना है, आधा किलो सेब ले लो। वैसा ही किया, हम जब अस्पताल पहुँचे तो डाक्टर साहब बोले मरीज़ आप्रेशन थियेटर में है, वहीं जा कर मिल लो। हम वहाँ गये, पूज्य सरदार जी साहब ने उनके ऊपर हाथ फेरा और वापस चले आये। शाम को खबर आई की आपरेशन ठीक हो गया है और अब वे ठीक हो गये हैं।

3. 1994 में मेरे दामाद साहब का ग्वालियर में किडनी का ऑपरेशन हुआ, पूज्य सरदार जी साहब ग्वालियर पधारे हुए थे, सत्संग के बाद मुझसे कहा कि आपके घर चलना है। ऑटो में मैं और पूज्य सरदार जी साहब बैठे थे। भजन की आवाज़ ज़ोरों से आ रही थी, मैंने ऑटो वाले से कहा कि भाई ज़रा अपना टेपरिकार्डर बंद कर दो। उसने जवाब दिया भाई साह्ब मेरे पास टेपरिकार्डर है ही नहीं, तो बंद क्या करूँ। मैंने गौर से सुनने की कोशिश की तो समझ में आया कि भजनों की आवाज़ पूज्य सरदारजी साहब के अंदर से आ रही थी।

पूज्य सरदारजी साहब गुरु समर्पण के मूर्तिमान स्वरूप थे। अपने आदर्शो के प्रति समर्पण आपके रोम रोम में रमा था। यही आपकी बहुमूल्य निधि थी, वे अपने गुरुदेव डा. श्रीकृष्णलाल जी महाराज के हाथों बिक गये थे, अपना कुछ नहीं रहा। कोई आगे पीछे विकल्प नहीं था।

..... ही शर्ते है वफा की आज़मा के देख लो,
खुद किसी के हो जाओ या अपना बनाके देख लो।

– आर सी जौहरी, ग्वालियर

जीवन में आस्था और विश्वास का महत्व

मनुष्य के लिये जीवन में आस्था और विश्वास दो बहुत बड़ी चीज़ें होती हैं। इसी के बल पर व्यक्ति बड़ी से बड़ी मुसीबत से पार हो जाता है। आस्था एक भंडारे की भांति मनुष्य को पथभ्रष्ट होने व दिशाहीन हो कर बह जाने से भी रोके रखती है। मनुष्य भवसागर में तैरता तो ज़रूर है पर डूबने या बह जाने से बच जाता है। यह आस्था ही सब प्रकार के मंगलों का मूल है। जीवन में प्रायः ऐसे अवसर आते हैं जब लोग संशय या दुविधा में पड़ जाते हैं। यह बड़ी खतरनाक स्थिति होती है क्योंकि इस स्थिति में मनुष्य एक तरफा नहीं होता बल्कि असमंजस में पड़ जाता है। स्पष्ट है ऐसी स्थिति में या तो अकर्मण्यता उत्पन्न होती है और आदमी कुछ नहीं कर पाता या फिर अनिश्चिंतता उत्पन्न होती है और आदमी पूर्ण मनोयोग व उत्साह से वो नहीं कर पाता जो उसे करना चाहिए। दरअसल वह भ्रम का शिकार हो कर गलत निर्णय ले लेता है और फिर सर्वनाश हो जाता है। यही बुद्धि के मोहग्रस्त होने तथा मन के भ्रमित होने के लक्षण व परिणाम हैं। महाभारत के युद्ध से पहले अर्जुन ऐसी ही स्थिति में पड़ गये थे। अतः संशय की स्थिति से सदैव बचना चाहिए। संशय, भ्रम, दुविधा, असमंजस और मोह तीन ही व्यक्तियों में नहीं होते। पहला वो जो ज्ञानी हो। पूर्ण ज्ञान होने से सभी प्रश्न, शंका आदि पहले ही हल हो जाते हैं और भ्रम का अवसर ही नहीं होता परंतु यह अत्यंत दुष्कर मार्ग है। पूर्ण ज्ञानी होना एक जन्म के प्रयासों में सम्भव ही नहीं है। अतः जन साधारण के लिये ऐसा कर पाना निरा स्वप्न ही है। दूसरा वह व्यक्ति जो विश्वास पर चलता है। गुरु, माता, पिता, पति, मित्र, भगवान आदि किसी पर उसका अडिग विश्वास होता है और उसके वचन को ही अंतिम मानता है। अपनी बुद्धि को बीच में नहीं लगाता। जो गुरु ने कह

दिया वह ही सत्य है, वही उचित है, वही अंतिम है, वही कल्याणकारी है, ऐसा मान कर संशय या दुविधा में नहीं पड़ता और गुरु वचनों का अक्षरशः पालन करता है। यह अपेक्षाकृत सरल मार्ग है। इसमें भी दो बड़ी समस्याऐं हैं, पहले तो सुयोग्य गुरु मिलना ही दुष्कर है। फिर मनुष्य अपनी बुद्धि लड़ाए बिना रह नहीं पाता और न ही वह सम्पूर्ण समर्पण कर पाता है और न ही सद्गुरु का मिलना सुलभ हो पाता है। अतः यह मार्ग भी सहज नहीं है, जैसा कि कबीर साहब ने कहा है :–

''पानी पिये छान के गुरु कीजे जान के''

तीसरा वह व्यक्ति होता है जो धर्म, भगवान, प्रकृति या अपनी अंर्तध्यानि पर आस्था रखता है। वह संशय, भ्रम, दुविधा आदि में पड़ता अवश्य है पर फँसता नहीं क्योंकि उसकी प्रबल आस्था उसका मार्ग दर्शन करके उसे बचा ले जाती है। अतः यह तो जय मार्ग है जो सबसे सहज और सरल है।जन साधारण के लिये यह मार्ग सबसे अधिक उपयोगी है और कल्याणकारी भी है क्योंकि संशय तो प्रगति रोक देने वाला घटक है और आस्था संशय निवारण का अचूक मंत्र।

मनुष्य में कुछ बनने के लिये, कुछ करने के लिये सबसे पहले प्रबल इच्छाशक्ति होनी चाहिए और अपने ऊपर दृढ़ विश्वास होना चाहिए। संकल्प और समर्पण अति आवश्यक है। तभी तो आगे बढ़ सकते है अन्यथा नहीं। खासकर मुझे अपने सद्गुरु पर पूरी आस्था और विश्वास है जिन्होंने दो बार प्रत्यक्ष हो कर मेरे प्राण बचाए। मैं अपने आप को बहुत भाग्यशाली और भाग्यवान मानती हूँ। किन किन शब्दों में वर्णन करूँ, बारम्बार नमन करती हूँ, आभार प्रकट करती हूँ।

गुरुदेव को शत शत नमन।

– इन्दु प्रसाद,
लहरिया सराय, दरभंगा

गीता सार

- कहता उन्हें मैं श्रेष्ठ, मुझमें चित्त जो धरते सदा।
  जो युक्त हो श्रद्धा सहित–मेरा भजन करते सदा।।
- अव्यक्त–सच्चिदानन्द–अनुपम, नित्य–अनादि।
  भजते–अचल–कूटस्थ–उत्तम सर्वव्यापी रूप को।।
- सब इंद्रियाँ साधे सदा सम–बुद्धि ही धरते हुए।
  पाते मुझे वे पार्थ, प्राणीमात्र हित करते हुए।।
- हो मत्परायण कर्म सब अर्पण मुझे करते हुए।
  भजते सदैव अनन्य मन से, ध्यान जो धरते हुए।।
- मुझमें लगाते चित्त उनका शीघ्र कर उद्धार मैं।
  इस मृत्युमय संसार से बेड़ा लगाता पार मैं।।
- मुझमें लगाले मन, मुझी में बुद्धि को रख सब कहीं।
  मुझमें मिलेगा फिर तभी, इसमें कभी संशय नहीं।।
- मुझमें धनन्जय जो न ठीक प्रकार मन पाओ बसा।
  अभ्यास योग प्रयत्न से–मेरी लगालो लालसा।।
- अभ्यास भी होता नहीं तो कर्म कर मेरे लिए।
  ये भी न हो तो आसरा मेरे लिये कर योग ही।।
- कर चित्त संयम–कर्म फल के त्याग सारे भोग ही।
- अभ्यास पथ से ज्ञान उत्तम, ज्ञान से गुरु ध्यान है।
  गुरु ध्यान से फल त्याग–करता, त्याग शान्ति प्रदान है।।
- बिन द्वेष सारे प्राणियों का–मित्र करुणावान हो।
  सम दुःख सुख में–मद न ममता–क्षमाशील महान हो।।
- जो तुष्ट नित मन–बुद्धि से–मुझमें हुआ आसक्त है।
  दृढ़ निश्चयी–संयमी–प्यारा मुझे वह भक्त है।।

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार–शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम सन्देश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम–सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट–छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम सन्देश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। वार्षिक चन्दा 20 (बीस) रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी. टी. रोड, ग़ाजियाबाद (उ.प्र.) 201009 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम सन्देश डाक द्वारा नहीं भेजा जाता है। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जाता है। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजि. ऑफिस

9 – रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,
गाज़ियाबाद – 201009

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी–66, सैक्टर–6, नोएडा–201301